The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 2 | Issue 3 | March 2024
ISSN: 2583-973X (Online)
Website: www.theacademic.in

ओदंतपुरी महाविहार: एक प्राचीन बौद्ध केंद्र का अवलोकन

दीपक कुमार
शोधार्थी, बौद्ध अध्ययन विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय ,दिल्ली

हंसराज मांडिया
शोधार्थी, बौद्ध अध्ययन विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय ,दिल्ली

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Keywords :
बौद्ध शिक्षा, बौद्ध धर्म, ओदंतपुरी, हीनयान, महायान और तंत्रयान

ABSTRACT

ओदंतपुरी महाविहार बिहार के एक प्रमुख बौद्ध शिक्षा केंद्र के रूप में प्रसिद्ध था, जिसकी स्थापना 8वीं शताब्दी में पाल सम्राट गोपाल ने की थी। यह महाविहार पाल काल में बौद्ध धर्म के अध्ययन और प्रसार के लिए एक महत्वपूर्ण स्थल था। ओदंतपुरी में बौद्ध धर्म के विभिन्न संप्रदायों – हीनयान, महायान और तंत्रयान का अध्ययन किया जाता था, और यह कई महान विद्वानों का घर था। यहां शिक्षा प्राप्त करने वाले प्रमुख आचार्य दीपंकर श्रीज्ञान और अभयकरगुप्त जैसे महान आचार्य थे, जिन्होंने तिब्बत और अन्य क्षेत्रों में बौद्ध धर्म का प्रसार किया। महाविहार की वास्तुकला अत्यधिक प्रभावशाली थी, जिसमें मुख्य मंदिर और चारों दिशाओं में स्थित महाविद्यालय शामिल थे। यहां लगभग 12,000 भिक्षु रहते थे। ओदंतपुरी महाविहार ने तिब्बत में बौद्ध धर्म के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, खासकर जब तिब्बती विद्वान यहां के ग्रंथों का अनुवाद करने के लिए आए थे। 12वीं शताब्दी में तुर्क आक्रमणकारियों ने ओदंतपुरी पर आक्रमण कर इसे नष्ट कर दिया, और इसके बाद यह महाविहार कभी भी पुनः स्थापित नहीं हो सका। प्रस्तुत शोध पत्र में ओदंतपुरी महाविहार के ऐतिहासिक योगदान का पुरातात्विक एवं साहित्यिक दृष्टि से अवलोकन किया गया है।

प्रस्तावना

प्राचीन बंगाल और मगध में पाल काल के दौरान कई मठ विकसित हुए। तिब्बती स्रोतों के अनुसार, पूर्वी भारत में पाँच महान महाविहार उभर कर सामने आए- विक्रमशिला, उस युग का प्रमुख महाविहार; नालंदा, जो अपने चरम पर था, ओदंतपुरी, सोमपुरा और जगदल महाविहार। ये पाँचों महाविहार राज्य की निगरानी में थे और उनके बीच समन्वय की एक प्रणाली थी। साक्ष्यों से ऐसा लगता है कि पाल शासकों के अधीन पूर्वी भारत में संचालित बौद्ध शिक्षा के पाँचों केंद्र एक दूसरे से परस्पर जुड़े हुए थे, और विद्वानों के लिए उनके बीच एक पद से दूसरे पद पर जाना आम बात थी।

ओदंतपुरी को उदंतपुरी या उद्दंडपुर भी कहा जाता है। यह महाविहार बिहार में पाल काल (8वीं से 12वीं शताब्दी ईस्वी) के दौरान बौद्ध शिक्षा का एक महत्वपूर्ण केंद्र था। इसने भारत के विभिन्न हिस्सों और विदेशों से विद्वानों और छात्रों को आकर्षित किया, जिसने इसे एक शैक्षणिक केंद्र के रूप में प्रतिष्ठा दिलाई। ओदंतपुरी महाविहार भारत के बिहार में आधुनिक बिहार शरीफ शहर के पास स्थित माना जाता है।

ओदंतपुरी की भौगोलिक स्थिति

ओदंतपुरी के स्थान के बारे में, इतिहासकार **एस. सी. दास** ने 18वीं शताब्दी के तिब्बती विद्वान सुम्पा खान-पो के विवरण के आधार पर अनुमान लगया कि "आधुनिक बिहारशरीफ शहर के पास एक पहाड़ी पर बनाया गया था।" तिब्बती विद्वान **गेंडुन चोफेल** (डीगे-डुन-चोस-फेल) (1903-1951) के अनुसार "बिहारशरीफ की पहाड़ी में ओदंतपुरी विहार के खंडहर माने जाते हैं। इस स्थान पर भारत का एक प्रसिद्ध मठ था और हमारे बसम-यास (सम्ये विहार) को उसी के आधार पर बनाया गया था"।

नम्-थर् नामक ग्रंथ के अनुसार, नालन्दा से उत्तर की ओर पैदल आधे दिन की यात्रा की दूरी पर एक पहाड़ी है, जहाँ फुल्लहरि था। नालंदा के उत्तर में इसके अतिरिक्त कोई और पहाड़ी नहीं है। उपरोक्त तथ्यों के अतिरिक्त ओदंतपुर के स्थल निर्धारण के विषय में कुछ अन्य सामग्री उपलब्ध होती है।

गया से प्राप्त एक शिलालेख के अनुसार, गया 'उदंडपुर देस' में स्थित था, जो उद्दंडपुर नामक एक जिले जैसे बड़े प्रशासनिक क्षेत्र को संदर्भित करता था। इसलिए, उदंडपुर नाम वाला विहार इस क्षेत्र के भीतर कहीं भी हो सकता था।

ओदंतपुरी की पहचान निम्नलिखित तीन साक्ष्यों के आधार पर बिहारशरीफ से की जाती है-

1. ब्रिटिश पुरातात्विक जोसेफ डेविड बेगलर ने सबसे पहले बिहार (बिहारशरीफ) शहर की पहचान ओदंतपुरी से की; क्योंकि इस शहर को दंडपुर, दंड बिहार या बिहार दांडी कहा जाता था।
2. फ्रांसिस बुकानन ने 6 जनवरी 1812 को बिहारशरीफ शहर का दौरा किया और अपने दैनिक जर्नल में चौड़ी खाई से घिरा हुआ एक विशाल किले के अवशेषों का वर्णन किया, हालांकि बाद के शहरीकरण ने जमीन पर सभी निशान मिटा दिए हैं।
3. बिहारशरीफ से प्राप्त बुद्ध की माँ महामाया की एक छोटी पीतल की मूर्ति , जिसके पीछे एक मन्नत शिलालेख में उद्दंडपुरा नाम का उल्लेख है।

हम बिहारशरीफ को ओदंतपुरी के स्थान के रूप में पहचानने के पक्ष में साक्ष्य की भी कमी है, क्योंकि बिहारशरीफ में अब तक बहुत सीमित पुरातात्विक अन्वेषण किया गया है। कोई भी जांच व्यवस्थित रूप से प्रलेखित नहीं की गई है, महाविहार के समान कोई बड़ी संरचना और कोई मठवासी मुहरें अभीतक सामने नहीं आई हैं।

ऐतिहासिक संदर्भ

ओदंतपुरी महाविहार की स्थापना आठवीं सदी के मध्य में बंगाल और बिहार में पाल वंश के संस्थापक गोपाल (730-740 ई.) ने की थी। हालाँकि, 14 वीं शताब्दी के तिब्बती बौद्ध भिक्षु **बुटोन रिनचेन ड्रूप** के अनुसार, ओदंतपुरी महाविहार का निर्माण गोपाल के बेटे और उत्तराधिकारी धर्मपाल ने करवाया था; जबकि **लामा तारानाथ** के अनुसार, इसकी स्थापना गोपाल या देवपाल द्वारा की गई थी। उनके अनुसार, पाल शासक महापाल ने ओदंतपुरी महाविहार में चार सौ स्थविरवादी श्रावक सेंधपा को आजीविका और आवास प्रदान करने के लिए उरुवास नामक एक विहार का निर्माण किया तथा ओदंतपुरी के श्रावकों को सम्मानित किया। उनके अनुसार, रामपाल के शासनकाल के दौरान , ओदंतपुरी में पचास शिक्षकों के साथ " हीनयान और महायान दोनों से संबंधित एक हजार भिक्षु स्थायी रूप से रहते थे तथा कभी-कभी बारह हजार भिक्षु भी वहाँ एकत्रित होते थे।

तिब्बती परम्पराओं से ओदंतपुर का क्रमबद्ध इतिहास पुनर्निर्मित नहीं किया जा सकता, केवल अनुमान लगाया जा सकता है कि इसकी स्थापना कब और कैसे हुई थी और इसका स्वरूप कैसा व महत्त्व कितना था। क्योंकि ये सूचनाओं के स्त्रोत है औ किंवदन्तियों से परिपूर्ण है।

तारानाथ और सुम्पा के अनुसार गोपाल और देवपाल के राज्यकाल के मध्य नारद नामक एक तांत्रिक शव साधना द्वारा तलवार की सिद्धि प्राप्त करना चाहता था। वह उन्ना नामक उपासक से मिला, और उसके साथ साधना

का प्रबंध किया जिससे कि वे शव को स्वर्ण में परिवर्तित कर सके। उस स्वर्ण से उन्ना ने सुमेरु व उसके चारों द्वीपों के आधार पर नालन्दा के समीप ओदंतपुर नमक विशाल मंदिर बनवाया था। बाद में उन्न ने अपनी मृत्यु के समय वह विहार देवपाल को दे दिया। परन्तु यह अवधारणा तिब्बती इतिहासकार बुस्तोन की किंवदन्ती के पूर्णतया प्रतिकूल है। उसके अनुसार ओदंतपुर महाविहार पाल राजा धर्मपाल द्वारा बनवाया गया था।

ओदंतपुरी महाविहार बौद्ध दर्शन अध्ययन का एक प्रमुख केंद्र था, जहाँ बौद्ध धर्म के हीनयान, महायान के साथ तंत्रयान के सिद्धांतों का भी अध्ययन होता था। बौद्ध दर्शन के हीनयान शाखा से सम्बंधित सर्वास्तिवादी सिद्धांत का यह प्रमुख केंद्र था। योगाचार **दार्शनिक रत्नाकरशांति** ने ओदंतपुरी के मठ में अपनी दीक्षा प्राप्त की थी। अपने जीवन के मध्य में उन्होंने बहुत प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा प्राप्त की और बाद में विक्रमशिला महाविहार के कार्यवाहक प्रमुख बने और विदेशों में पढ़ाने के लिए कई प्रस्ताव प्राप्त किए।

तिब्बती परम्परा में ओदंतपुरी महाविहार के साथ कुछ महान व प्रसिद्ध विद्वानों के नाम जुड़े है, जिनमें बंगाल के **अतिश (दीपंकर श्रीज्ञान)** (980-1054) सबसे प्रमुख थे। आतिश ने यहाँ हीनयानवादी आचार्य शीलरक्षित के शिष्य आचार्य धर्मरक्षित से दो वर्षों तक शिक्षा ग्रहण की थी। उन्नीस वर्ष की आयु में उन्होंने ओदंतपुरी के महासंघिक आचार्य शीलरक्षित से पवित्र व्रत प्राप्त किए, जिन्होंने उन्हें दीपंकर श्रीज्ञान नाम दिया। इस स्थान से दीपंकर विक्रमशिला गए जहाँ वे संस्था के प्रमुख बने और तिब्बत जाने तक वहीं रहे। दीपंकर ने तिब्बत में बौद्ध धर्म के प्रसार में प्रमुख भूमिका निभाई एवं अपने प्रमुख शिष्य ड्रोम टोंपा के साथ, कदमपा सम्प्रदाय की स्थापना की।

महायान एवं वज्रयान के महान ग्रंथकार **अभयकरगुप्त** (1064-1125) ने ओदंतपुर महाविहार में आचार्य के पद पर रहे एवं अनेकों बौद्ध ग्रंथों का तिब्बती में अनुवाद किया था। अभयकरगुप्त की 26 कृतियाँ में से पच्चीस तिब्बती भाषा में संरक्षित हैं और तेरह मूल संस्कृत में अभी भी मौजूद हैं। उनकी रचनाओं में से बाईस को तांत्रिक और चार को गैर-तांत्रिक के रूप में वर्गीकृत किया गया है। उनकी गैर-तांत्रिक रचनाएँ मुख्य रूप से मध्यमक दर्शन पर केंद्रित हैं।

लिपि के क्षेत्र में भी ओदंतपुरी महाविहार ने अपनी एक अलग पहचान कायम की थी। **अलबरूनी** ने इस महाविहार की विशेष लिपि 'भैक्सुकी' का उल्लेख किया है। **प्रो. क्यामुद्दीन अहमद** ने तत्कालीन बिहार के तीन अन्य महाविहारों से ओदंतपुरी महाविहार को इस लिपि के आलोक में अलग ठहराया है। इसी भारतीय लिपि से आचार्य दीपंकर श्रीज्ञान ने तिब्बती लिपि का निर्माण किया था। इसके अतिरिक्त अनुवाद और सम्पादन,

पांडुलिपियों की प्रतिलिपियाँ तैयार करना आदि कार्यकलापों में भी इस महाविहार को सिद्धहस्तता प्राप्त थी। तिब्बती भाषा के अनुवाद का तो यह महाविहार एक महत्त्वपूर्ण केंद्र था।

अत: स्पष्ट होता है कि अपने संस्थापक एवं उनके कुछ उत्तराधिकारियों के काल में यह विहार प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ और फला फुला था। ओदंतपुरी महाविहार को उन्नत शिक्षण संस्थान बनाने में पाल शासकों गोपाल, धर्मपाल, देवपाल, संपाल, महिपाल और महपाल एवं यहाँ के आचार्यों और विद्यार्थियों जिनमें आतिश दीपंकर, अभयंकर गुप्त, प्रभाकर, ज्ञानश्रीमित्र, रत्नाकरशांति एवं शांतरक्षित आदि का अहम योगदान रहा था। लेकिन यह केंद्र अधिक समय तक अपनी महत्ता बनाए न रख सका और करीब साढ़े चार शताब्दियों में ही पतनोन्मुख हो गया। इस बात का स्पष्ट आभास नग-त्सो द्वारा अपने गुरु दीपंकर श्रीज्ञान (आतिश) की स्मृति में रचें एक "80 श्लोकों के स्त्रोत" से होता है। वे लिखते है कि ग्यारहवीं शताब्दी का अंत होते होते "ओदंतपुर अपने 53 भिक्षुओं सहित" पतनोन्मुख हो चूका था।

ओदंतपुरी महाविहार की वास्तुकला

8वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में राजा **त्रिसोंग देत्सेन** (742-797 ई.) ने भारतीय बौद्ध आचार्यों पद्मसंभव और शांतरक्षित को यारलुंग आने और धर्म का प्रचार करने के लिए आमंत्रित किया था। आचार्य शांतरक्षित जब 743 ई. में तिब्बत गए तो उन्होंने वहां पर ओदंतपुरी महाविहार के समरूप ही 749 ई. में एक बौद्ध विहार **'सम्ये विहार'** का निर्माण कराया था। शीर्ष मंजिलों के लिए भारतीय शैली की लकड़ी की संरचनाओं का उपयोग किया गया था, जबकि मध्य मंजिल में विशिष्ट चीनी ईंट संरचना का उपयोग किया गया था। इससे ओदंतपुर महाविहार के विशाल मूल वास्तुशिल्प के नक़्शे का अनुमाना लगाया जा सकता है। लेकिन सम्ये विहार स्वयं ही खण्डहर में परिवर्तित हो चूका है।

1874 ई. में तिब्बत की खोज में लगे बाडुेल के सहयोगी नैनसिंह जब तिब्बत में रहे तो मूल इमारत का कुछ भाग विद्यमान था। उनके वर्णनानुसार महाविहार में एक विशाल मन्दिर, , चार बड़े महाविद्यालय, और अनेकों अन्य इमारतें समाहित थी, जो लगभग 2.25 किमी. परिधि के एक ऊंचे गोलाकार हॉल से घिरा हुआ था, जिसके चार विशाल द्वार दिशाओं की ओर थे। इस ऊंची गोलाकार दीवार के शीर्ष पर लगभग 1030 ईंटों से बने व्रतानुष्ठित स्तूप थे। इन व्रतानुष्ठित स्तूपों पर प्राचीन भारतीय अक्षरों में शिलालेख देखे जा सकते हैं। सभा भवन गोलाकार दीवार के बीच में था, जिसमें बड़े मंदिर से समान दूरी पर स्थित चार चैत्यों की ओर जाने वाले विकिरणित समूह थे। मंदिर की दीवारों पर भारतीय और चीनी अक्षरों में कई बड़े शिलालेख भी पाए गए थे। मुख्य मंदिर के प्रकोष्ठ में, द्वार के बायीं ओर, सचित्र जीवन चक्र का विशाल प्रतिरूप है।

तिब्बती स्त्रोतों से हमें ज्ञात होता है कि ओदंतपुरी महाविहार ने अपनी शैक्षणिक गतिविधियाँ काफी समय तक कायम रखी। एक तिब्बत किंवदन्ती के अनुसार इस महाविहार में आवासिक भिक्षुओं व श्रामणेरों की संख्या 12,000 दी गई है। जिससे प्रतीत होता है कि यह एक विशाल व समृद्ध केन्द्र था। पालवंशी राजाओं ने यहाँ एक उत्कृष्ट पुस्तकालय की भी स्थापना की थी, जिसमें ब्राह्मण और बौद्ध दोनों ही धर्मों एवं संस्कृतियों से सम्बंधित उच्च स्तर के ग्रंथ विद्यमान थे।

इन सभी संदर्भों के बाद भी, मुख्य रूप से तिब्बती स्रोतों के माध्यम से, हम ओदंतपुरी विहार के पूर्ण वास्तुशिल्प विवरण प्राप्त नहीं कर सकते हैं, जब तक कि साइट पर क्षैतिज रूप से बड़े पैमाने पर खुदाई न की जाए। हम ओदंतपुरी विहार के बारे में कुछ अनुमान लगा सकते हैं। इसे चार द्वारों वाली एक गोलाकार दीवार के अंदर बनाया जाना चाहिए था, जिसमें एक बहुमंजिला मंदिर था, इस परिसर के चारों ओर भिक्षुओं के लिए मठवासी कक्षों के साथ संभवतः चार बड़े आकार के मन्नत स्तूप बनाए गए थे। ओदंतपुरी विहार का यह अनुमानित पुनर्निर्माण पाल राजा की एक महत्वाकांक्षी परियोजना थी, जिन्होंने इसे नालंदा महाविहार के बराबर बनवाया था।

ओदंतपुरी महाविहार का पतन

लामा तारानाथ ने लिखा है कि 12वीं शताब्दी में चार सेन राजाओं (12वीं शताब्दी ईस्वी) के समय इस क्षेत्र में विदेशियों की संख्या में वृद्धि हुई और "ओदंतपुरी और विक्रमशिला की रक्षा के लिए, सेन राजा ने इन्हें आंशिक रूप से किलों में परिवर्तित कर दिया और वहां कुछ सैनिकों को भी तैनात किया"।

12 वीं शताब्दी में तिब्बती भिक्षु और तीर्थयात्री **धर्मस्वामी** (चाग लो त्साबा चोस-रजे-दपाल) ने 1234 और 1236 के बीच भारत की यात्रा की थी। धर्मस्वामी की जीवनी के अनुसार, जब उन्होंने उद्दंडपुरा का दौरा किया, तो यह एक तुरुश्का (तुर्किक) सैन्य कमांडर का निवास था। विक्रमशिला को तुरुश्का सेना ने पूरी तरह से नष्ट कर दिया था। नालंदा में , 80 छोटे विहार थे, जिन्हें तुरुश्काओं द्वारा क्षतिग्रस्त किए जाने के बाद छोड़ दिया गया था, और केवल दो विहार ही कार्यात्मक थे। सौ से भी कम भिक्षु वहाँ रहते थे, और पिथिपति वंश के बुद्धसेन नामक एक स्थानीय राजा ने नालंदा के 90-वर्षीय मठाधीश राहुला श्रीभद्र को आर्थिक रूप से सहायता की। राहुल श्रीभद्र ने धर्मस्वामी को एक छात्र के रूप में स्वीकार किया, और दोनों ने संस्कृत बौद्ध ग्रंथों का तिब्बती भाषा में अनुवाद किया।

1175 ई. में मुस्लिम आक्रमणकारी मुहम्मद बिन बख्तियार खिलजी ने सर्वप्रथम इसी को अपना निशाना बनाया और अधिकांश भिक्षुओं को मौत के घाट उतार दिया तो कुछ भिक्षु बंगाल तथा उड़ीसा की ओर भाग गए और अंत में इस विहार में आग लगवा दी। इस तरह यह महाविहार हमेशा के लिए समाप्त हो गया।

निष्कर्ष

ओदंतपुरी महाविहार का इतिहास अत्यधिक समृद्ध और गौरवमयी रहा है। प्राचीन नालन्दा महाविहार के बाद यह मगध क्षेत्र में दूसरा सबसे पुराना महाविहार पाल काल में एक प्रमुख बौद्ध शिक्षा केंद्र था, जहाँ हीनयान, महायान और तंत्रयान के सिद्धांतों का अध्ययन किया जाता था। ओदंतपुरी में लगभग 12,000 छात्र रहते थे, जो इसके विशाल और समृद्ध प्रतिष्ठान को दर्शाते हैं। हालांकि, तुर्क आक्रमण के कारण 12वीं शताब्दी के अंत में ओदंतपुरी महाविहार का पतन हुआ, और यह कभी पुनर्स्थापित नहीं हो सका। बावजूद इसके, इस महाविहार ने भारतीय और तिब्बती बौद्ध धर्म के विकास में अहम योगदान दिया था, और इसके विद्वानों ने तिब्बत में बौद्ध धर्म के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। ओदंतपुरी महाविहार का उत्खनन कार्य नहीं होने के कारण यह आज भी धरती के गर्भ में दफ़न है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:

- Amar, A. S. (2019). Reassessing the Muslim attacks and the decline of Buddhist monasteries in the thirteenth century Magadha. In B. Auer & I. Strauch (Eds.), *Encountering Buddhism and Islam in premodern Central and South Asia* (pp. 48–74). De Gruyter.
- Barua, D. K. (Ed.). (1969). *Viharas in ancient India*. Indian Publications.
- Beglar, J. D. (1878). *Archaeological Survey of India Report 1872-73* (Vol. VIII).
- Chattopadhyaya, A., & Chimpa, L. (Trans.). (1990). *Taranatha's history of Buddhism in India* (D. Chattopadhyaya, Ed.). Motilal Banarsidass Publishers Pvt. Ltd.
- Cunningham, A. (1880). *Archaeological Survey of India Report 1875-76 and 1877-78* (Vol. XI).
- Das, S. C. (1965). *Indian Pandits in the land of Snow*. Firma K.L. Mukhopadhyay.
- Jackson, V. H. (Ed.). (1922). *Journal of Francis Buchanan (Patna and Gaya Districts). Journal of the Bihar and Orissa Research Society*, 8(III & IV).
- Keay, F. E. (1942). *Indian education in ancient and later times: An inquiry into its origin, development, and ideals*. Baptist Mission Press.
- Kielhorn, F. (1891). Gaya stone inscription of the reign of Sultan Firur Shah; The Vikrama year 1429. *Indian Antiquary*, 20, 312.
- Kuraishi, M. H. (1931). *List of ancient monuments protected under Act VII of 1904 in the province of Bihar and Orissa*. Archaeological Survey of India, New Imperial Series.

- Mazumdar, N. N. (1916). *A history of education in ancient India*. Cotton Press.
- Patil, D. R. (1963). *Antiquarian Remains in Bihar*. Kashi Prasad Jayaswal Research Institute.
- Raverty, H. G. (Trans.). (1881). *Tabakat-i-Nasiri: A general history of the Muhammadan dynasties of Asia, including Hindustan* (Vol. 1).
- Roerich, G. (Trans.). (1959). *Biography of Dharmasvamin (Chag lo tsa-ba Chos-rje-dpal): A Tibetan monk pilgrim*. K P Jayaswal Research Institute.
- Rajani, M. B. (2021). Patterns in past settlements: Geospatial analysis of imprints of cultural heritage on landscapes. *Springer Remote Sensing/Photogrammetry*, Springer.